प्रस्तावना

प्रस्तावना

आज एक ओर जहां विज्ञान ने नित नये अन्वेषणों से मनुष्य को स्वास्थ्य के मूलभूत सिद्धांतो से अवगत कराया है, वहीं दूसरी ओर इससे बहुत पूर्व इस चतुर्दिक विस्तीर्ण प्रकृति ने इस धरा पर अवतीर्ण मानव को चिरकाल स्वस्थ रहकर जीवन जीने की कला सिखायी है। यह समय का दुर्भाग्य है कि जहां लाखों लोग पर्याप्त भोजन एवं जीवन निर्वाह के साधनों को जुटाने में संघर्षरत है, वहीं मुट्ठी भर लोग अतिभोजन तथा अन्य ऐश्वर्य प्रधान जीवन यापन कर अकाल मृत्यु को प्राप्त हो रहे है।

वर्तमान आधुनिक यान्त्रिक जीवन पद्धति में एवं भागदौड़ युक्त अस्थिर वातावरण में आयुर्वेद शास्त्र में स्वास्थ्य हेतु वर्णित दिनचर्या एवं ऋतुचर्या का पालन नहीं किया जाता है, जिसके परिणामस्वरुप आज समाज में पूर्णतः 'स्वस्थ' व्यक्ति कम दृष्टिगत होते है। शरीर की सुदृढता एवं मन की प्रसन्नता व्यक्ति को दीर्घायुषी बनाती है।

शरीरं आद्य खलु धर्मसाधनम्।

धर्म–अर्थ–काम–मोक्ष इस पुरुषार्थ चतुष्टय की प्राप्ति इसी शरीर के द्वारा होती है। अतः शरीर को निरन्तर स्वस्थ रखना मानव का प्रथम कर्तव्य है। स्वास्थ्य रक्षण एवं व्याधि निर्हरण के मार्गदर्शनार्थ ही आयुर्वेद शास्त्र की उत्पत्ति हुई है।

सोऽयमायुर्वेदः शाश्वतो निर्दिश्यते, अनादित्वात, स्वभावसंसिध्दलक्षणत्वात्।

ब्रम्हा ने विश्वसृजन में प्राणियों की उत्पत्ति के पूर्व ही आयुर्वेद की रचना की।

अनुत्पाद्यैव प्रजा आयुर्वेदमेवाऽग्रेऽसृजत्। (सुश्रुत)

सृष्टि से पूर्व आयुर्वेद की रचना उसी प्रकार सम्भव है जिस प्रकार शिशु की उत्पत्ति के पूर्व स्तन्य की उत्पत्ति हो जाती है।

बालस्योत्पतेः पूर्वं स्तन्योव्दमनभिव सृष्टेः।

प्रथमत आयुर्विज्ञान स्वरतोऽपि सम्भति।। (काश्यप संहिता)

आयुर्वेद के दो उद्देश्य है – एक स्वस्थ पुरुष के स्वास्थ्य का रक्षण तथा दूसरा रोगी के विकार का निवारण करना।

समस्त संसार स्वास्थ्य एवं चिकित्सा विज्ञान के प्रति सजग हो रहा है। समय के अनुसार मनुष्य के जीवन सिद्धांत बदलते जा रहे हैं। दीर्घायु की अपेक्षा मनुष्य निरोगी

जीवन को ज्यादा महत्व दे रहा है। अतः जब भी कोई विकृति मानव जीवन को दुःखी करती है तो उसके बारे में विस्तृत ज्ञान प्राप्त किया जाता है। जैसा की 'बायरान' ने कहा है कि नरक स्वरुप जीवन से अज्ञात स्वर्ग ज्यादा सुखद होता है। आमवात भी इसी तरह का एक रोग है जो मनुष्य के सुखद जीवन को नरक बना देता है, जिससे जीवन कष्टदायक हो जाता है।

आधुनिक जीवनशैली यन्त्रवत बन चुकी है। इस चक्र में मनुष्य को स्वयं की जीवनचर्या स्थापित करना असम्भव तो नही अपितु कठिन अवश्य हो सकती है। जीवनचर्या की अनियमितता, आन्तरिक शारीरिक क्रियायें एवं मानसिक स्थितियों का मिला जुला परिणाम आज का आमवात रोग है, जो शरीर के आन्तरिक विकार के साथ साथ संधियों में विकृति उत्पन्न करता है।

वर्तमान समय में आमवात रोग चिकित्सकों के सामने एक चुनौती के रुप में है कारण यह है कि आधुनिक चिकित्सा विज्ञान में इस रोग का सम्यक् उपचार नहीं है एवं इस व्याधि से ग्रसित रोगियों की संख्या में उत्तरोत्तर वृद्धि भी हो रही है, इस व्याधि में आयुर्वेदीय चिकित्सा कारगर है।

आमवात व्याधि का स्वतंत्र रुप से वर्णन चरक, सुश्रुतादि ग्रंथों मे उपलब्ध नहीं है। लेकिन सामवात का वर्णन बृहत्रयी में मिलता है। आमवात व्याधि का वर्णन विशेषतः लघुत्रयी में मिलता है। आमवात व्याधि के बारे में पूर्णतः स्पष्ट ज्ञान 'माधवनिदान' में प्राप्त होता है। यह व्याधि आयुर्वेद शास्त्र के मतानुसार बाल्यावस्था से लेकर प्रौढ़ावस्था के अंतः तक पायी जाती है। आधुनिक शास्त्र के मतानुसार २0 वर्ष से ५0 वर्ष की आयु में अधिकतर पायी जाती है। विश्व में इस व्याधि से ४0 प्रतिशत लोग पीड़ित पाये जाते है। जिसमें युवा पीढ़ी अधिकतर पीड़ित पायी जाती है।

जिस व्याधि में आम से युक्त वातदोष विविध संधियों में विकृति उत्पन्न कर देता है, ऐसी व्याधि को 'आमवात' नाम से जाना जाता है। इस व्याधि में आम तथा वात प्रकुपित होकर कोष्ठ, त्रिक्प्रदेश, जानु आदि संधियों में प्रविष्ठ होकर सारे शरीर को जकड़ देता है। यह अत्यंत पीड़ाकर एवं मध्यम मार्ग में आश्रित व्याधि है।

'आमेन सहित वात आमवात' एवं ***'आमश्च वातश्च आमवात'*** ऐसी आमवात शब्द की व्युत्पत्ति मानी गयी है। आमवात शब्द आम और वात इन दो शब्दों से बना हुआ है। आम और वात कटि, त्रिक्, जानु, गुल्फ आदि संधियों में प्रवेश करके संबंधित स्थानों

पर शोथ, शूल, स्तब्धता आदि उत्पन्न कर आमवात की उत्पत्ति करते है। विशेषतः बड़ी संधियों में होने वाले सशूल एवं सज्वर शोथ को आमवात कहते है। यह मध्यम मार्ग में होने वाला कृच्छ्रसाध्य व्याधि है। व्याधि विरुध्द आहार विहार करने वाले मंदाग्नि व निश्चेष्ट मनुष्य का आमरस वायु से प्रेरित होकर श्लेष्मा के मुख्यस्थान आमाशय, संधि, हृदय इत्यादि में जाकर वहाँ स्थित समान गुणधर्मी कफ से मिलकर और भी विकृत एवं विद्ग्ध हो जाता है, धमनियों में पहुॅच कर त्रिदोष प्रकोप से प्रभावित होकर शरीर के स्त्रोतों में क्लेद उत्पन्न करता हैं। जिससे दुर्बलता, हृदय में भारीपन, अंगों में पीड़ा, शोथ, अरुचि, आलस्य होता हैं। वात और कफ एक साथ प्रकुपित होकर कोष्ठ, त्रिकप्रदेश व संधियों में प्रविष्ट होकर समस्त शरीर को जकड़ लेता है तथा वृश्चिक दंशवत वेदना से मानव को व्यथित कर देता हैं।

आमवात व्याधि को आधुनिक वैद्यक शास्त्र में Rheumatoid Arthritis कहते हैं। इस व्याधि से लगभग ४0% लोग पीड़ित पाये जाते हैं। आधुनिक चिकित्सा शास्त्र के विकासोन्मुख प्रगति ने इसकी चिकित्सा के अनेक योग उत्पन्न किये हैं तथापि संपूर्ण लाभ के लिए वे वैज्ञानिक आज भी सफल नहीं हुए।

युगपत्कुपितावन्तस्त्रिकसन्धिप्रवेशकौ।

स्तब्धं च कुरुतो गात्रमामवातः स उच्यते।। (माधव निदान 25।5*)*

आयुर्वेद शास्त्र के अनुसार आमवात की संप्राप्ति में अग्निमांद्य आमरस और वात की प्रधानता होती हैं।

संशोधनं संशमनं निदानस्य च वर्जनम्।

एतावद् भिषजा कार्ये रोगे रोगे यथाविधि।। (च.वि. 7।3*)*

1) संशोधन 2) संशमन 3) निदान परिवर्जन

इसमे संशोधन का स्थान प्रथम है क्योंकि संशोधन के द्वारा शुध्द किये गये दोषों के पुनः प्रकुपित होने की सम्भावना नही होती है।

जिताः संशोधनैः ये तु न तेषां पुनरुद्भवः। (च.सू. 16।20*)*

पंचकर्म उपचारों द्वारा विकृत दोषों का शोधन किया जाता है। इसमें स्नेहन, स्वेदन यह पूर्वकर्म तथा वमन, विरेचन, अनुवासन बस्ति, निरुह बस्ति और नस्य ये प्रधान कर्म एवं पश्चात कर्म का अंतर्भाव होता है।

इन पंचकर्म द्वारा शरीर स्थित दोषों को बाहर निकालकर चिकित्सा की जाती है। आयुर्वेद शास्त्र में पंचकर्म का महत्व अत्याधिक माना गया है। पंचकर्म को आयुर्वेदीय चिकित्सा की 'आत्मा' कहा जाता है। इन पंचकर्म में बस्ति एक ऐसी चिकित्सा पध्दति है, जिसे आयुर्वेद शास्त्र में 'अर्धचिकित्सा' माना जाता है, क्योंकि यह वात दोष की प्रधान चिकित्सा है। तथापि वात, पित्त, कफ तीनों दोषों में, रक्त में, दोषों के संसर्ग में यह लाभप्रद होती है। शरीर में रोग प्रसार के शाखा, कोष्ठ और मर्म में तीन मार्ग होते है। इन तीनों मार्गों में दोषों को प्रस्तृत करने में वायु की बहुत ज्यादा उत्तरदायीता होती है। उस वायु के लिए बस्ति परमश्रेष्ठ चिकित्सा कही गयी है। बस्ति में प्रयुक्त द्रव्य के आधार पर बस्ति के दो भेद किए गये है।

१. निरुह बस्ति

२. अनुवासन बस्ति

निरुहबस्ति : जिस बस्ति में क्वाथ की प्रधानता होती है, उसे निरुहबस्ति कहते है। निरुहबस्ति का ही दूसरा नाम आस्थापन बस्ति है। दोषों को शरीर से बाहर निकाल देने के कारण अथवा रोगों को हरण करने के कारण इसे 'निरुह' कहा जाता है और वयस्थापन करने के कारण 'आस्थापन' कहा जाता है।

अनुवासनबस्ति : जिस बस्ति में स्नेह मुख्य द्रव्य होता है, उसे अनुवासन बस्ति कहते है। अनुवासन की निरुक्ति इस तरह से की गयी है कि अनुवासन बस्ति द्रव्य शरीर के अंदर रहते हुए भी कोई दोष उत्पन्न नहीं करती तथा अनुदिन–प्रतिदिन दी जा सकती है, वह अनुवासन बस्ति हैं।

लंघनं स्वेदनं तिक्तं दीपनानि कटूनि च।
विरेचनं स्नेहपानं बस्तश्चाममारुते।।
सैन्धवाद्येनानुवास्य क्षारवस्तिः प्रशस्यते।। (चक्रदत्त 25।1)

आमवात व्याधि के चिकित्सा में सर्वप्रथम लंघन, स्वेदन, तिक्त पदार्थ, अग्निदीपक पदार्थ और कटु पदार्थ का सेवन करना, विरेचन, स्नेहपान तथा 'बस्तिकर्म' प्रशस्त माना है। आमवात व्याधि में शोधन एवं क्षार बस्ति का प्रयोग प्रशस्त माना गया है। सैन्धवादि तैल द्वारा अनुवासन एवं क्षारवस्ति देना चाहिये। क्षारवस्ति में प्रयुक्त द्रव्य इमली, गुड़, सैंधव, गोमूत्र और शताह्वा सभी द्रव्य उष्ण, वीर्यात्मक, त्रिदोषघ्न विशेषतः वातशामक और

अग्निदीपक हैं। वायु के अनुलोमन के लिए और अग्निदीपन के लिए क्षारवस्ति प्रयोग किया गया हैं।

समाज में बढते हुये आमवात के प्रतिशत को देखकर एवं इस रोग के साथ उपद्रव स्वरुप होने वाली अन्य विकृति ने मुझे इस रोग पर अध्ययन करने हेतु प्रेरित किया। आमवात के प्रति आधुनिक चिकित्सा प्रणाली की असमर्थता को ध्यान में रखते हुये आयुर्वेद की प्रचलित पंचकर्म चिकित्सा – वृहत सैन्धवादि तैल की बाहयवस्ति (जानुवस्ति) एवं क्षारवस्ति के चिकित्सकीय प्रभाव का वैज्ञानिक मापदण्डों पर अध्ययन का प्रयास किया गया है।

शोध प्रबंध के अध्याय –

अध्याय 1 – सैद्धान्तिक अनुशीलन – इस अध्याय के अंतर्गत आमवात व्याधि का ऐतिहासिक, आयुर्वेद संहिताओं में वर्णित निदान, पूर्वरुप, रुप, संप्राप्ति, प्रकार, दोष–दूष्य सम्मूर्च्छना, चिकित्सा एवं पथ्यापथ्य का सैद्धान्तिक अध्ययन किया गया है। साथ ही आधुनिक शास्त्र में वर्णित Rheumatoid Arthritis का विवेचन किया गया है।

अध्याय 2 – औषधि द्रव्य विवेचन – चक्रदत्त के आमवात प्रकरण में वर्णित वृहत सैन्धवादि तैल एवं क्षारवस्ति में प्रयुक्त औषधि द्रव्यों के रस, गुण, वीर्य, प्रभाव, रासायनिक संघटन, उपयुक्त अंग, कार्मुक्ता आदि का विस्तार पूर्वक विवेचन किया गया है।

अध्याय 3 – पर्यवेक्षण एवं चिकित्सात्मक अध्ययन – चिकित्सापरक अध्ययन हेतु विशेष शोध पद्धति, रोगी चयन, रोगी संख्या, समूह वर्गीकरण, व्याधि विनिश्चय, रोगी परीक्षण, औषधि चयन का आधार, औषधि योजना, चिकित्सकीय प्रभाव का आंकलन, चिकित्सा के सम्पूर्ण प्रभाव का अध्ययन तथा प्राप्त परिणामों का सांख्यिकी विश्लेषण किया गया।

अध्याय 4 – विमर्श – इस अध्याय के अंतर्गत चिकित्सकीय अध्ययन में प्राप्त परिणाम तथा वृहत सैन्धवादि तैल की जानुवस्ति एवं क्षारवस्ति का आमवात के रोगियों में चिकित्सकीय प्रभाव का वैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत किया गया।

अध्याय 5 – सार संक्षेप एवं निष्कर्ष – इस अध्याय के अंतर्गत सम्पूर्ण शोध पद्धति का संक्षिप्त विवेचन तथा अन्तिम निष्कर्ष प्रस्तुत किया गया।